ओ३म्

श्रेष्ठ मानव जीवन का आधार – 'वैदिक संस्कार'

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

संस्कार की चर्चा तो सभी करते व सुनते हैं परन्तु संस्कार का शब्दार्थ व भावार्थ क्या है? संस्कार किसी अपूर्ण, संस्काररहित या संस्कारहीन वस्तु या मनुष्य को संस्कारित कर उसका इच्छित लाभ लेने के लिए गुणवर्धन या अधिकतम मूल्यवर्धन value addition करना है। यह गुणवर्धन व मूल्यवर्धन भौतिक वस्तुओं का किया जाये तो वैल्यू एडीसन कहलाता है और यदि मनुष्य का करते हैं तो इसे ही संस्कार कह कर पुकारते हैं।

मनुष्य जन्म के समय शिशु शारीरिक बल व ज्ञान से रहित होता है। पहला कार्य तो अच्छी प्रकार से उसका पालन–पोषण द्वारा शारीरिक उन्नति करना होता है। इसे शिशु का शारीरिक संस्कार कह सकते हें। यह कार्य माता के द्वारा मुख्य रूप से होता है जिसमें पिता व परिवार के अन्य लोग भी सहायक होते हैं। बच्चा माता का दुग्ध पीकर, कुछ माह पश्चात स्वास्थ्यय व पुष्टि वर्धक भोजन कर तथा व्यायाम आदि के द्वारा शारीरिक विकास व वृद्धि को प्राप्त होता है। मनुष्य की पहली उन्नति शरीर की उन्नति होती है और इसके लिए जो कुछ भी किया जाता है वह भी संस्कार ही है। शारीरिक उन्नति के पश्चात सन्तान के लिए सुशिक्षा की आवश्यकता है। शिक्षा रहित सन्तान शूद्र, पशु वा ज्ञानहीन कहलाती है और शिक्षा प्राप्त कर उसकी संज्ञा द्विज अर्थात ज्ञानवान होती है और वह अपने प्रारब्ध व इस जन्म के आचार्यों द्वारा प्रदत्त ज्ञान से ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य बनकर देश व समाज की उन्नति में योगदान करता है। इस प्रकार से संस्कार की यह परिभाषा सामने आती है कि जीवन की उन्नति जो कि धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति का साधन है, के लिए जो–जो शिक्षा, वेदाध्ययन आदि कार्य व क्रियाकलाप किये जाते हैं वह संस्कार कहलाते हैं।

चार वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद ईश्वरीय ज्ञान हैं जो कि सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों क्रमशः अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को वैदिक भाषा संस्कृत के ज्ञान सहित दिये गये थे। इन वेदों में ईश्वर ने वह ज्ञान मनुष्यों तक पहुंचाया जो आज 1,96,08,53,114 वर्ष बाद भी सुलभ है। **यह वेदों का ज्ञान ही मनुष्य की समग्र उन्नति का आधार है।** इस ज्ञान को माता–पिता और आचार्यों से पढ़कर मनुष्य की समग्र शारीरिक, बौद्धिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति होती है। उदाहरण के रूप में हम आदि पुरूष ब्रह्माजी, महर्षि मनु, पतजंलि, कपिल, कणाद, गौतम, व्यास, जैमिनी, राम, कृष्ण, चाणक्य, दयानन्द आदि ऐतिहासिक महापुरूषों को ले सकते हैं जिनकी शारीरिक, बौद्धिक और आत्मिक उन्नति का आधार वेद था। वेदाध्ययन यद्यपि वेदारम्भ और उपनयन इन दो संस्कारों के अन्तर्गत आता है परन्तु इन दोनों संस्कारों का महत्व अन्यतम है। नित्य आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय का भी जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। **वेदों के आधार पर जिन सोलह संस्कारों का विधान है वह क्रमशः गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोनयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह–गृहस्थ, वानप्रस्थ–संन्यास व अन्त्येष्टि संस्कार हैं।** इन संस्कारों को करने से मनुष्य की आत्मा सुभूषित, संस्कारित एवं ज्ञानवान होती है और जीवन के चार पुरूषार्थों **धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष** को प्राप्त कर सकती है। इनके साथ नित्य प्रति पंचमहायज्ञों यथा सन्ध्योपासना, दैनिक अग्निहोत्र, पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ एवं बलिवैश्वदेव यज्ञ का करना अनिवार्य है। इन संस्कारों को विस्तार से जानने के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत संस्कार विधि ग्रन्थ और इसके अनेक व्याख्या ग्रन्थ जिनमें संस्कार भास्कर और संस्कार चन्द्रिका आदि मुख्य हैं, का अध्ययन लाभप्रद होता है।

वैदिक धर्म और संस्कृति में वेदों व वैदिक साहित्य का अध्ययन किए हुए युवक व युवति का विवाह योग्य सन्तान और देश के श्रेष्ठ नागरिकों की उत्पत्ति के लिए होता है। **संसार के शिक्षित और अशिक्षित सभी माता–पिता अपनी सन्तानों को स्वस्थ, दीर्घायु, बलवान, ईश्वरभक्त, धर्मात्मा, मातृ–पितृ–आचार्य–भक्त,**

विद्यावान, सदाचारी, तेजस्वी, यशस्वी, वर्चस्वी, सुखी, समृद्ध, दानी, देशभक्त आदि बनाना चाहते हैं। इसकी पूर्ति केवल वैदिक धर्म के ज्ञान व तदनुसार आचरण से ही सम्भव है। आज की स्कूली शिक्षा में वह सभी गुण एक साथ मिलना असम्भव है जिससे ऐसे योग्य देशभक्त नागरिक उत्पन्न हो सकें। केवल वैदिक शिक्षा से ही इन सब गुणों का एक व्यक्ति में होना सम्भव है जिसके लिए अनुकुल सामाजिक वातावरण भी आवश्यक है। हमारे सभी वैदिक कालीन और कलियुग में महर्षि दयानन्द इन्हीं वैदिक संस्कारों में दीक्षित महात्मा थे। वेदों के ज्ञान के कारण ही हमारे देश में ऋषि, महर्षि, योगी, सन्त आदि हुए हैं। अन्य देशों में यह सब गुण किसी एक व्यक्ति में पूरी सृष्टि के इतिहास में नहीं देखे गये हैं। हमारे पौराणिक मित्र व बन्धु वेदों के अध्ययन व आचरण को त्याग कर पुराण सम्मत मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलितज्योतिष, छुआछूत, जन्म पर आधारित जातिवाद जैसे अवैदिक व अनुचित कृत्यों को करने में समय लगाते हैं। इन अवैदिक कृत्यों का जीवन से निराकरण केवल पक्षपातरहित होकर सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों का अध्ययन कर सदविवेक से कार्य करने पर ही हो सकता है।

सन् 1947 में भारत विदेशी दासता से स्वतन्त्र हुआ। आवश्यकता थी कि देश में सर्वत्र, आध्यात्मिक जीवन में सत्य की प्रतिष्ठा हो, परन्तु इसके विपरीत धर्मनिरपेक्षता का सिद्धान्त बना जहां ईश्वर के सत्य ज्ञान वेदों को प्रतिष्ठा नहीं मिली। सभी मतों की पूजा पद्धतियां अलग–अलग हैं। इन्हें संस्कारों व कुसंस्कारों का मिश्रण कहा जा सकता है। अलग–अलग उपासना पद्धतियों से परिणाम भी निश्चित रूप से अलग–अलग ही होंगे। सभी उपासना पद्धतियों से धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति होना असम्भव है। वह केवल वैदिक उपासना पद्धति से ही सम्भव है। अतः संस्कारों को केन्द्र में रखते हुए अपने जीवन को सत्य को ग्रहण करने वाला, असत्य को निरन्तर व हर क्षण छोड़ने के लिए तत्पर रहने वाला, सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य व्यवहार करने वाला बनाना होगा। यह संस्कारों से ही सम्भव है और यह संस्कार मर्यादा पुरूषोत्तम राम व योगश्वर कृष्ण सहित हमारे प्राचीन ऋषि–मुनियों एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती में रहें हैं जिनका हमें अनुकरण करना है। इन महापुरूषों के जीवन चरित का अध्ययन कर उनके गुणों को आत्मसात कर सुसंस्कारित हुआ जा सकता है।

निष्कर्ष यह है कि संस्काररहित मनुष्य पशु के समान होता है। अतः प्रत्येक मनुष्य को संस्कार विधि का गहन अध्ययन कर संस्कारों की विधि और उनके महत्व को जानना व समझना चाहिये। वेदाध्ययन कर वेदानुसार आचरण करना चाहिये। शारीरिक उन्नति पर ध्यान देना चाहिये। शुद्ध शाकाहारी व पुष्टिकारक भोजन करते हुए संयमपूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहिये।

–मनमोहन कुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001 / फोनः09412985121